इकाई 11 उर्वरक

इकाई की रुपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 वैदिक वाङ्मय में उर्वरकों का विवेचन

11.3 कार्बनिक उर्वरक (गो अपशिष्ट उर्वरक)

11.3.1 निर्माण विधि

11.3.2 अनुप्रयोग

11.4 भेड़–बकरी एवं मत्स्य अपशिष्ट उर्वरक

11.5 पंचगव्य एवं मांस से निर्मित उर्वरक

11.6 पोषक उर्वरक

11.7 कुणप जल उर्वरक

11.7.1 सामग्री

11.7.2 प्रयोग विधि

11.8 पादप विशेष हेतु विशेष उर्वरक

11.9 सारांश

11.10 पारिभाषिक शब्दावली

11.11 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

11.12 अभ्यास प्रश्न

11.0 उद्देश्य

प्रिय विद्यार्थी ! आप संस्कृत साहित्य में विज्ञान में स्नातकोत्तर डिप्लोमा (PGSKT) MSK-24 कार्यक्रम के द्वितीय खण्ड (संस्कृत वाङ्मय में कृषिविज्ञान) के इकाई सं० 11 "उर्वरक" का अध्ययन करने जा रहें हैं जिसके अध्ययन से आप –

1. भूमि में उर्वरता वृद्धि के लिये कार्बनिक उर्वरक अर्थात् गोबर की खाद के निर्माण एवं अनुप्रयोग की विधि का ज्ञान प्राप्त कर पायेगें।
2. पंचगव्य एवं मांस से निर्मित उर्वरकों के निर्माण की विधि को समझ पाएगें।
3. पौधों की उत्तम बढोत्तरी के लिए पोषक उर्वरक निर्माण की विधि का अवबोध कर पायेगें।
4. पौधों के लिए उत्तम पोषक के रूप में तैयार सघन विलयन जिसे कुणप जल कहा जाता है, के विषय में जानकारी कर पायेगें।
5. संस्कृत साहित्य में विशेष पादपों हेतु विशेष उर्वरकों का भी उल्लेख है। इन सभी उर्वरकों का अध्ययन करेगें।

11.1 प्रस्तावना

वर्तमान कृषि प्रणाली में जैविक तथा कार्बनिक खादों के स्थान पर अधिकतम पैदावार की दृष्टि से अविवेकपूर्ण तरीके से अधिकाधिक रासायनिक उर्वरकों को प्रयोग किया जा रहा है। भूमि में अधिक क्षारीयता तथा अनुर्वरता में वृद्धि के लिए रासायनिक उर्वरकों की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। प्रतिवर्ष भारत मे रासायनिक उर्वरकों के उत्पादन के बढने पर भी हमे उर्वरक आयात करने पडते हैं हमारी कृषि पूर्णतः रायायनिक उर्वरकों पर निर्भर हो चुकी है अतः किसानों को अधिकाधिक मूल्य चुका कर भी रासायनिक उर्वरक खरीदने पडते हैं। किसानों का भार कम करने के लिये भारत सरकार प्रतिवर्ष हजारों करोड रूपये सब्सिडी देकर किसानों को खाद उपलब्ध कराती है। मांग अधिक होने के कारण प्रतिवर्ष हजारों टन रासायनिक उर्वरक विदेशों से आयात करने पडते है। वर्तमान समय में अनेक उर्वरकों का प्रयोग हो रहा है यथा–

यूरिया– एक कार्बनिक यौगिक है। कार्बनिक रसायन के क्षेत्र में इसे कार्बामाइड भी कहा जाता है। यह एक रंगहीन, गन्धहीन, सफेद, रवेदार जहरीला ठोस पदार्थ है। यह जल में अति विलेय है। यह स्तनपायी और सरीसृप प्राणियों के मूत्र में पाया जाता है। कृषि में नाइट्रोजनयुक्त रासायनिक खाद के रूप में इसका उपयोग होता है।

फास्फोरस (स्फूरः)– इससे जडों की बढवार अच्छी होती है। वे स्वस्थ तथा मजबूत होती है फसल शीघ्र पकती है एवं बीज पुष्ट होते है, उपज अधिक होती है। दलहन की फसलों एवं फलो के लिए इसका खाद्य अधिक उपयोगी होता है।

पोटाश – शर्करा मुक्त पदार्थो की बनावट के लिये व फलों के सुन्दर आकार तथा उनके बेहतर स्वाद के लिये इसकी आवश्यकता होती है। इससे पौधे मजबूत होते हैं तथा बीमारियो से बचाव कर सकते हैं।

गंधक – मिटटी में गंधक की कमी के कारण फसल की कीटव्याधियों के प्रति निरोधक क्षमता में कमी के साथ जड़ों की ग्रन्थियों की कमी से नई कोपलें पीली पडने लगती है। इसकी पूर्ति के लिये गंधक युक्त उर्वरक जैसे सिंगल सुपर फास्फेट (12 प्रतिशत गंधक) अमोनिया सल्फेट (24 प्रतिशत गंधक) आदि के प्रयोग की सलाह दी जाती है।

भारत में यूरिया की खपत सर्वाधिक है; अतः इस पर सरकार द्वारा मूल्य निर्धारण योजना के अन्तर्गत रियायत दी जाती है। पहले फास्फोरस तथा पोटाश उर्वरक नियंत्रित श्रेणी में नहीं थे अब उन्हें भी रियायत योजना में सम्मिलित किया गया हैं।

रासायनिक उर्वरकों के दुष्प्रभावों को कम करने तथा संस्थायी कृषि को बढावा देने के उद्देश्य से कार्बनिक खादों और जैव उर्वरकों के साथ संतुलन स्थापित करते हुये मिट्टी परीक्षण के आधार पर उचित मात्रा में उर्वरकों के प्रयोग को लोकप्रिय बनाने के प्रयास किया जा रहा हे। केन्द्र व राज्य सरकार वार्षिक कार्य योजनाओं में कार्बनिक खाद तैयारी–प्रशिक्षण प्रोत्साहन आदि कार्यक्रम संचालित कर रही हैं।

भारतीय परम्परागत कृषि में कृषि तथा पशुपालन दोनों का उत्तम समन्वय स्थापित किया गया। भारत सरकार जैव उर्वरकों के पर्यावरण अनुकूल तथा सस्ते पादप पोषक तत्त्व के स्रोत के रूप में प्रयोग को बढावा देने के लिये छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान जैव उर्वरकों के विकास तथा प्रयोग की राष्ट्रीय परियोजना शुरू की जो नौंवी

पंचवर्षीय योजना तक जारी रही। इसका लक्ष्य जैव उर्वरकों को प्रोत्साहित करना, उनका विस्तार करना, तत्संबंधी प्रशिक्षण देना और प्रर्दशन करना था। इसके अंतर्गत गाजियाबाद में राष्ट्रीय जैव उर्वरक विकास केन्द्र की स्थापना सहित जबलपुर, नागपुर, बैंगलोर, भुवनेश्वर, हिसार तथा इम्फाल में छह क्षेत्रीय जैव उर्वरक विकास केन्द्र स्थापित करने का प्रावधान था। राष्ट्रीय कार्बनिक खेती परियोजना में समाहित कर दिया गया है। नई गतिविधियों के लिये राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय जैव उर्वरकों विकास केन्द्रों के नाम बदल कर राष्ट्रीय कार्बनिक खेती केन्द्र (आर.सी.ओ.एफ.) तथा क्षेत्रीय कार्बनिक खेती केन्द्र (आर.सी.ओ.एफ.) कर दिये गये हैं। इसमें कार्बनिक उत्पादों का प्रमाणीकरण, क्षमता निर्माण, वित्तीय सहायक, कम्पोस्ट ईकाईयां, उर्वरक उत्पादन कृमिपालन तथा उत्पादनशालायें, कार्बनिक कृषि को विस्तृत व प्रोत्साहित करना प्रमुख ध्येय है।

संस्कृत वाङ्मय में उल्लिखित तथा प्राचीन समय से भारत में प्रचलित परम्परागत खेती प्रकृति, शास्त्रीय साहित्य में वर्णित उर्वरक तथा पोषण की तकनीकें कार्बनिक कृषि के क्षेत्र में महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती हैं। ये तकनीकें भारत के भौगोलिक तथा जलवायवीय परिवेश के अनुसार सैकडों वर्षों तक परीक्षित तथा प्रमाणित रहीं है। उद्यानिकी फलोत्पादन, पुष्पोत्पादन में तो यह अत्यन्त समृद्ध रही हैं। उपवन विनोद, वृक्षायुर्वेद, शिवतत्त्तवरत्नाकर आदि कृषि शास्त्रों में पशुओं के तथा खाद्यान्नों के अपशिष्ट तथा इन्हीं पदार्थो से निर्मित की गई खादों का प्रयोग प्रशस्त कहा गया है। पूर्वोक्त ग्रन्थों में विभिन्न पादप प्रजातियों के अनुरूप उनके पोषण तत्त्व निर्माण की तकनीकें बताई गई है। वैदिक काल से ही प्रारम्भ कर हम भारतीय कृषि में उर्वरक तथा पादप पोषण के सम्बन्ध में प्राप्त विचारों को निम्नानुसार समेकित कर सकते हैं। रासायनिक उर्वरक जैसे यूरिया आदि से केवल तत्त्व विशेष नाइट्रोजन की तो पूर्ति होती है, लेकिन अन्य मृदा के पोषक तत्त्वों की मात्रा कम तथा असन्तुलित हो जाती है। भूमि में फास्फोरस, पोटेशियम, सूक्ष्म पोषक तत्वों –जिंक आयरन, बोरान, मैग्नीज आदि की कमी हो जाती है। जैविक खादों के प्रयोग से भूमि मे सभी पोषक तत्वों का सन्तुलन स्थापित रहता है तथा गुणवत्ता में निरन्तरता बनी रहती है। वर्तमान समय में भी देश में जैविक कृषि को प्रोत्साहित किया जा रहा है। वैज्ञानिकों ने मृदा में जैवांशों की मात्रा में कमी को देखते हुए अधिकाधिक कार्बनिक खादों के प्रयोग को अनुसंशित किया है। अतः जैविक उर्वरक की दृष्टि से देखा जाए तो कृषि के लिये उर्वरक या खाद की गुणवत्ता, उपयोगिता को भलिभांति समझकर खेती में घी–दूध तथा शहद एवं औषधियों के रस–मिश्रण से कृषि में उर्वरता वृद्धि की विधियों का उल्लेख भी मिलता है। संस्कृत साहित्य में भूमि में उर्वरता वृद्धि के लिये कार्बनिक उर्वरक अर्थात् गोबर की खाद के निर्माण एवं अनुप्रयोग की विधि का विवेचन भी उपलब्ध होता है। इसी के साथ पशु अपशिष्टों यथा पंचगव्य एवं मांस से निर्मित उर्वरकों का विशद् वर्णन प्राप्त होता है। हमें संस्कृत वाङ्मय में पौधों की उत्तम बढ़ोत्तरी के लिए पोषक उर्वरक पौधों के लिए उत्तम पोषक के रूप में तैयार सघन विलयन जिसे कुणप जल का भी उल्लेख प्राप्त होता है। संस्कृत साहित्य में विशेष पादपों हेतु विशेष उर्वरकों का भी उल्लेख है। प्रिय विद्यार्थी ! आइए हम संस्कृत वाङ्मय में वर्णित उर्वरकों के निर्माण एवं प्रयोग का अध्ययन करते हैं–

11.2 वैदिक वाङ्मय में उर्वरकों का विवेचन

वैदिक आर्य कृषि की अनुकूल परिस्थितियों के लिये आवश्यक साधनों के विषय में पूर्ण जानकारी रखते थे। समृद्ध कृषि उत्पादन हेतु सभी प्रमुख साधन– भूमि, सूर्यताप, वायु,

जल, उर्वरता, संरक्षण आदि से सम्बद्ध सूचनाऐं वैदिक साहित्य में उपलब्ध होती है। ऋग्वैदिक काल से भी भारतीय कृषि में खाद के प्रयोग को अनुशंसित किया गया है। वैदिक ऋषि दीर्घतमा कहते हैं कि ऋभु देवता गोबर को अन्य भागों से पृथक् करते है–

आ निम्रुचः शकृदेको अपाभरत्।

शतपथ ब्राह्मण में सूखे गोबर के लिये करिष् शब्द का प्रयोग किया गया है। वैदिक काल में खाद के लिये मुख्यतः गाय का गोबर प्रयोग होता था, जिसके लिये करिष–शकन, शकृत आदि शब्दों को प्रयोग प्राप्त होता था। अथर्ववेद के गोष्ठ सूक्त में गोवंश की प्रार्थना मे गायों से अधिकाधिक गोबर पैदा करने की भी कामना की गई है। गोवंश का सुखपूर्वक विस्तार हो यह प्रार्थना है–

संजग्माना अबिभ्युषीरस्मिन् गोष्ठे करीषिणीः।

बिभ्रती : सोम्यं मध्वनमीषा उपेतन ।।

इहैव गाव एतनेहो पुष्यत।

इहैवोत प्र जायध्वं मयि संज्ञानमस्तु वः।।

अथर्ववेद में ही खाद को फलवती भी कहा गया है –

करीषिणी फलवती स्वधाम्।

कृषि के लिये उर्वरक या खाद की गुणवत्ता, उपयोगिता को भलिभांति समझकर खेती में घी–दूध तथा शहद एवं औषधियां के रस–मिश्रण से कृषि में उर्वरता वृद्धि की भी सूचना वैदिक साहित्य में विद्यमान हैं। यह मिश्रण उपचार परवर्ती कृषि–शास्त्र में विकसित होता चला गया। यजुर्वेद में यह कहा गया कि हमारी सीता (भूमि) घी–मधु–दुग्ध से तथा औषधियों से उपचारित हो–

घृतेन सीता मधुना समज्यताम्, ऊर्जस्वती पयसा पिन्वमाना।
संवपामि समाप ओषधीभि : समोषधयो रसेन।।

उपर्युक्त मिश्रण की खाद से उत्तम कृषि के कतिपय उदाहरण श्रीपाद दामोदर सातवलेकर ने अपने अथर्ववेद भाष्य में प्रस्तुत किये है। अथर्ववेद के एक मंत्र के अनुसार अर्जुन, जौ की बाल, तिल सहित तिल की मजरी द्वारा रोगनाश कर पोषण प्रदान किये जाने का उल्लेख है–

बभ्रोरर्जुन काण्डस्य यवस्य ते पलाल्या तिलस्य तिलपिञ्ज्या।
वीरूत् क्षेत्रियनाशन्यप क्षेत्रिय मुच्छतु।।

11.3 कार्बनिक उर्वरक (गो अपशिष्ट उर्वरक)

संस्कृत वाङ्मय में भूमि में उर्वरता वृद्धि के लिये कार्बनिक उर्वरक –गोबर की खाद के प्रयोग को ही अनुशंसित किया है। इसके निर्माण एवं अनुप्रयोग की विधि बताई जा रही है –

11.3.1 निर्माण विधि

पराशर ने गोवंश के महत्त्व तथा देखभाल के विषय में गोशाला के समुचित प्रबन्धन एवं विधि निषेधों के विषय में बताया है। गोपर्व उत्सव के मूल में उद्धेश्य, गोवंश का

कृषि के लिये महत्त्व प्रख्यापित करना रहा है। पशुओं के स्वास्थ्य से कृषि कर्म का सम्बन्ध है अतः पशुधन की उचित देखभाल के प्रति पराशर किसानों को सावचेत करते है। गोमयकृटोद्धार शीर्षक से पराशर ने गोबर की खाद का श्रेष्ठ उर्वरक के रूप में परिष्कृत करने की विधि बताई है। आज भी परम्परागत कृषि पद्धति में भारत के ग्रामों –खेतो में यह प्रचलित है। गायों का गोबर वर्ष भर, सदैव एक ही स्थान पर डालना चाहिये इससे वह एक ढेर के रूप में जमा हो जाता है। माघ के महिने में उस ढेर की पूजा करके शुभ दिन तथा नक्षत्र में उसे फावडे से उठाना चाहिये। उसके बाद सबका चूरा करके धूप में सुखा कर उस खाद को प्रत्येक खेत के गड्ढे में फाल्गुन मास में डालें। बुवाई के समय उस खाद को निकाल कर खेतो में डालना चाहिये–

माघे गोमयकूटं तु सम्पूज्य श्रद्धयान्वितः।
शोभने दिवसे ऋक्षे कुदालैस्तोलयेत्ततः।।

रौद्रे संशोष्य तत् सर्वम् कृत्वा गुण्डकरूपिणम्।
फाल्गुने प्रतिकेदारे सारं गर्ते निधापयेत्।

ततो वपन काले तु कुर्यात् सार विमोचनम्।
बिना सारेण यद्धान्यं वर्धते फलवर्जितम्।।

उक्त श्लोकों में महर्षि पराशर ने कालानुरूप गोबर की परिष्कृत खाद की निर्माण विधि बताते है :–

1. वर्षभर एक ही स्थान पर गोबर एकत्रित करते रहें।
2. माघमास (जनवरी–फरवरी) में गोबर के इस ढेर को उठाना चाहिये।
3. चूरा करके सूखने पर फाल्गुन (मार्च) में इसे खेतो में निर्मित गर्ता मे डाल देना चाहिये।
4. बुवाई के समय गड्ढों से निकालकर खेतो मे डालना चाहिये।

माघ मास पर्यन्त गोबर के ढेर लगे रहने से उसमें लाभदायक, तरल उर्वरक नाइट्रोजन समूह बचा रहता है तथा अमोनिया का वाष्पीकरण कम होता है। माघ में सूर्य किरणों से गोबर में क्रियाशील तत्वों की न्यूवता की संभावना से बचते हुये इसे चूरा करके गड्ढों में डालने से इसकी गुणवत्ता में वृद्धि हो जाती है। उर्वरक निर्माण की यह पारम्परिक विधि प्राचीनकाल से ही चली आ रही है।

11.3.2 अनुप्रयोग

उक्त निर्मित गोबर की कार्बनिक खाद का उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है? इस तथ्य की जानकारी भी संस्कृत साहित्य में सम्यक् प्रकार से विवेचित है।

आचार्य कश्यप कृषि तथा पशुपालन की परस्पर सम्बद्धता को प्रशस्त करते हुये पशुओं के अपशिष्ट मल को ही भूमि सार के रूप में महत्व देते हैं। भूमि की जुताई के उपरान्त उसमें गोबर की खाद देनी चाहिए–

प्रथमं भू कर्षणं द्वितीयं गोशकृत्कणम्।
तत्र क्षिपेश्च भूसारकलनार्थमिदं विदुः।।

काश्यप खेत में खाद डालने के उचित समय के विषय में कहते है कि जब खेत में बोये गये बीजों में अंकुरण दिखाई देने लगे तब उसमें भूसार या खाद डालनी चाहिए–

आढकाद्यङ्कुरोत्पत्ति : दृश्या सीरस्थले तदा।
सा च भूसार योगेन निश्चिता शास्त्रकोविदैः।।

गेहूं, तिल, चना, उड़द, आदि फसलों में अंकुरण के लगभग एक माह उपरान्त जब उनमें अनेक शाखोपशाखायें फैल जाती है तब उनमें प्रचुर मात्रा मे गोबर खाद डालनी चाहिये। काश्यप खाद डालने से पूर्व कर्तव्य कृषि कर्म के विषय में कहते हैं कि खेत में उर्ग तृणादि खरपतवार को निकालने के बाद ही खाद डालनी चाहिये –

बीजानां नाशजनके सन्निरस्ते तृणादिके।
तदा शाखोपशाखानां अकुंरादङ्करान्तरम्।।

मूले पुष्कल सारं च कलयेत् कलमादिवत्।
अतस्तृणानां कन्दानां शत्रूणां निवहे हते।।

आचार्य काश्यप गोबर की खाद के साथ– साथ बकरी के अपशिष्ट मल तथा वनस्पतियों से प्राप्त हरी खाद के उपयोग की भी सलाह देते है। कृषि कर्मियों को पौधों की पंक्तियों के अनुसार ही उनमें खाद डालनी चाहिये, जिससे उर्वरता व्यर्थ न हो। खाद डालने के उपरान्त थोडी सी सिंचाई कर देनी चाहिये। सिंचाई से खाद में स्थित पौष्टिक तत्व घुलनशील होकर पौधों की जड़ों तक पहुंच जाते है–

अजाशकृत्कणैरेवं गवां चापि शकृत्कणैः।
लता वृततिभिर्वापि प्राप्त सारे सयत्नके।।

पंक्तिशः पंक्तिशो भृत्यैः विन्यसेत्समभूमिके।
तत्र क्षेत्रे स्वल्पजलं स्थापनीयमनन्तरम्।।

खाद को भूमि मे डालने से पहले उसके बारीक करना आवश्यक है, जिससे वह कणों के रूप में मृदा में सम्मिश्रित हो सके।

11.4 भेड़–बकरी एवं मत्स्य अपशिष्ट उर्वरक

शास्त्रीय साहित्य में प्रमुख रूप से पादप पोषण की विधियां बताई गई है। पौराणिक साहित्य मे विश्वकोश के समान विख्यात अग्निपुराण के वृक्षायुर्वेद अध्याय मे भी पादप पोषणकी विधियां प्रशस्त की गई है। अग्निपुराण के अनुसार पौधों में घी, शीतलजल का सिंचन, फल–फूलों की वृद्धि लिये सदैव श्रेष्ठ रहता है। साथ ही उनमें भेड–बकरी के अपशिष्ट का चूरा, जौ का चूर्ण तथा तिलों का चूर्ण (संभवतः खल) तथा पशु मांस के साथ जल विलय बनाकर सात रात्रियों तक देना चाहिये। इसकी सिंचाई से फल–फूलों में बढिया बढवार होगी। मछलियों के अवशिष्ट का पानी भी श्रेष्ठ पादप पोषक है। इससे भी वृक्षों में वृद्धि होती है –

घृतशीतपयःसेकः फलपुष्पाय सर्वदा।
आविकाजशकृच्चूर्णं यवचूर्णं तिलानि च।।
गोमांसमुदकञ्चौव सप्तरात्रं निधापयेत्।
उत्सेकः सर्ववृक्षाणां फलपुष्पादिवृद्धिदः।।
मत्स्याम्भसा तु सेकेन वृद्धिर्भवति शाखिनः।

11.5 पंचगव्य एवं मांस से निर्मित उर्वरक

आचार्य कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में बीज उपचार विधि, बीजवपन के साथ–साथ पौधों को खाद देने का प्रावधान किया है। ईंख के पोरों पर कटी जगह पर शहद, घी, सूअर की चर्बी का प्रयोग तथा कन्दफलों कपास, कटहल, आम आदि के लिए गोबर, घी, शहद, हड्डियों के चूरे आदि का उपयोग उत्तम बताया है –

मधुधृत शूकरवसाभि शकृद्युक्ताभि काण्डबीजानां

छेदलेपो मधुघृतेन कन्दानाम्, अस्थिबीजानां शकृदालेपः, शाखिनां

गर्तदाहो गोस्थिशकृद्भिः काले दौह्रदं च।

बीज बोने के बाद जब जमीन में अंकुर निकल आए तब इनमें गीली छोटी मछलियों का खाद लगाना चाहिए तथा सैंडे के दूध से पौधों को सींचना चाहिए –

प्ररूढांश्चाशुष्क कटुमत्स्यांश्च स्रुहिक्षीरेण वापयेत्।

11.6 पोषक उर्वरक

आचार्य वराह मिहिर ने वृहत्संहिता में पौधों की उत्तम बढोत्तरी के लिए पोषक उर्वरक निर्माण की विधि विधि बताई है। भेड़ और बकरी की मेंगण का चूरा दो आढक, तिल एक आढक, सत्तू,जौ का आटा एक प्रस्थ, पानी एक द्रोण इन सब को एक तुला गाय या बैल के मांस के साथ लगभग सप्ताह भर पड़ा रहने दे इसके बाद इसे खाद के रूप में पेड़ की जडों में डालें –

उर्वरक निर्माण की विधि से पूर्व यहां इन प्राचीन आढकादिमान को समझना आवश्यक है –

पदार्थ	प्राचीनमान	आधुनिक मात्रा
भेड़ या बकरी की मेंगण का चूरा	2 आढक	8 किलो
तिल	1 आढक	4 किलो
जौ का सत्तू	1 प्रस्थ	1 किलो
पानी	1 द्रोण	16.5 किलो
पशु मांस	1 तुला	6.3 किलो
कुल		36 किलो

11.7 कुणप जल उर्वरक

कुणप जल को अधिकांश आचार्यों द्वारा पोषण के लिए इसे श्रेष्ठ पोषक विलयन के रूप में स्वीकार किया गया है। कुणप जल जैविक अपशिष्टों तथा खाद्यान्नों द्वारा निश्चित प्रविधि से तैयार किया जा सकता है। आचार्य शार्ङ्गधर ने कुणप जलनिर्माण की विधि निम्न रूप में बतायी है –

कुरंगकिटिमत्स्यानां मेघच्छागलखड्गिनाम्

मासं ग्राह्यं यथालाभं मेदोमज्जा वसास्तथा

तान्सर्वानेकतः कृत्वा वह्नौ नीरण पाचयेत्

संपक्वं हि क्षिपेत्भाण्डे तत्र दुग्धं च निक्षिपेत्
चूर्णिकृत्य खलिर्द्देया तिलानां माक्षिक तथा
स्विन्नांश्च सरसान्माषांस्तत्र दद्यात् घृतं तथा
उष्णं जलं क्षिपेत्तत्र मात्रा नास्तीह कस्यचित्
पक्षैक स्थापिते भाण्डे कोष्णस्थाने मनिषिणा
कुणपस्तु भवेदेवं तरुणां पुष्टिकारकः।
कुणप जलनिर्माण की विधि :–

11.7.1 सामग्री

कुणप जलनिर्माण हेतु सामग्री है–

१. हिरण, सुअर, मछली, बकरी तथा गैंडे का मांस, वसा तथा मज्जा
२. दूध, घी
३. तिल की खल
४. उड़द
५. शहद तथा गर्म जल

11.7.2 निर्माण विधि

सर्वप्रथम हिरण, सुअर, मछली, बकरी तथा गैंडे आदि के अपशिष्ट मांस मज्जा आदि को जितनी भी मात्रा में उपलब्ध हो काम लेना चाहिए। इन्हीं को परस्पर मिलाकर पानी में डालकर आग पर पकाना चाहिए। पकने पर उसे बर्तन पर डालें तथा उसमें गर्म दूध मिलाएं तदनंतर उसमें तिलों की खल का चूरा तथा शहद डालें। भीगा हुआ उड़द, घी तथा गरम पानी को उसमें डाल कर मिलाएं। इस पात्र को किसी गर्म जगह पर 15 दिन के लिए रख दें। 15 दिन बाद यह पौधों के लिए उत्तम पोषक के रूप में तैयार सघन विलयन बन जाएगा। इसे ही कुणप जल कहा जाता है।

आचार्य सुरपाल के अनुसार भूमि के नीचे एक पक्ष तक भंडारित किया गया शूकर का मल, हड्डियों की मज्जा, मांस मस्तिष्क तथा रक्त का जल सहित मिश्रण कुणप जल कहलाता है –

वराहविट्वसामांसा समज्जमष्तिष्कशोणिताम्
पक्षस्य सजलं भूमौ कुणपपरिकीर्तितम्।

11.8 पादप विशेष हेतु विशेष उर्वरक

संस्कृत साहित्य में विशेष पादपों हेतु विशेष उर्वरकों का भी उल्लेख है। तिन्दुक वृक्ष को चावल एवं उड़द का जल पर्याप्त मात्रा में दिया जाये तथा पारावत वृक्ष का नीम की पत्तियों के सत से पोषित किया जाए तो वे फलों से लद जाते हैं।

मातुलुंगी वृक्ष में बकरी का दूध, मांस, मछली, गोबर, चावल एव तिल की खली के साथ मिश्रित एवं खमीर उठाये गये जल से पर्याप्त सिंचन किया जाये तो पेड मधुर, मृदु, गूदेदार तथा विशाल (घट) आकार के फलों से लद जाता है।

बीजपूरक वृक्षों को यदि लोमडी के मांस मिश्रित जल से सिंचित किया जाए तथा मांस गुड एवं दूध के साथ मिश्रित पानी से सींचा जाय तो संतरा (नारंगी) उत्तम किस्म के फल प्रदान करता है। संतरे के पेड में यदि विडंग, उडद, तिल, सरसों तथा हल्दी व खरगोश का मांस बिल्व के साथ मिश्रित कर जल के साथ दिया जाय तथा खरगोश के मांस का धुंआ दिया जाए तो संतरे का वृक्ष फलों से झुक जाता है।

सुरपाल फूलदार पौधों की खाद के विषय में भी कहते हैं। मधूक वृक्ष में कलया (दाल की किस्म), अंकोल की छाल का चूर्ण एवं मांस के मिश्रण का धूँआ देकर रेशेदार जड तथा जालिनी के पत्तों से उसे उपचारित किया जाये तो मधूक के वृक्ष कपूर के समान सुगंधित पुष्प देते हैं। सौवीर वृक्ष में देशी मदिरा, दही, शूकर की वसा, तिल से तथा क्षिरिन्द्रिका में कुणप जल से पोषण करना चाहिये। श्यामा, कदम्ब तथा नागकेसर में भी यही खाद देनी चाहिए। ऐसा करने से ये पौधे सुगन्धित फूलो से लद जाते हैं। जनु खस तथा मुस्ता की कोमल पत्तियो के क्वाथ को मदिरा में मिलाकर सभी फूलदार पौधों में डाला जा सकता है, ऐसा करने से पौधे फूलों से भर जाते हैं –

जंतू पल्लव कोसीरमुस्तक्वाथैः सुरान्वितैः
पुष्पाणां जातयः सर्वा परिपुष्पं सेचिताः।।

केतकी के पौधे में इलायची जैसी सुगंधित वस्तु से ठीक प्रकार से यदि सिंचन किया जाये तथा मांस का अर्क डाला जाय तो यह फूलों से खिल उठती है –

एलादिगन्ध द्रव्याणां सलिलैः परिषेचिताः।
टामिषक्वाथ संपुष्टापुष्पाढ्या केतकी भवेत्।

मल्लिका पर सूखी ज्वाला से हल्का सेक पाटल पौधा भौरों का एकमात्र आश्रय बन जाता है तथा अत्यधिक पुष्पित होता है, यदि दूध तथ जल के मिश्रण से सींचा जाये–

पुष्पश्रियं वितनुतेतृणवह्निलोलकीलाकलापकवलैः कलिता च मल्ली।
सिक्ता पयः शावल शीतलवारिपूरैः स्यात्पाटल च मधुपैक विलासभूमिः।।

कपास में मत्स्य – मांस युक्त जल का छिडकाव, यूथी पादप मे दूध तथा तिल एवं सूखे गोबर युक्त जल का सेचन किया जाये, सप्तच्छद एवं शेफालिका को मत्स्य मांस समृद्ध जल पिलाया जाए तो ये पौधे अत्यधिक खिलते हैं।

सुरपाल ने कुछ सब्जियों के लिये भी उर्वरक बताये है। बिर्भटी, अलम्बु, कर्काः, त्रिपुस आदि शाकों के पौधों पर यदि ग्रीष्म ऋतु में शूकर अस्थियों का धुआं दिया जाये तो इन पर प्रचुर उत्पादन होता है। यदि चावल के माण्ड (स्टार्च) मिश्रित जल से सिंचाई की जाये तो अलम्बुका में थोडे समय में ही अधिक फल आने लगते है –

आशु तंडुल मंडेन सिक्ताः पर्युषितेन च।
सदैवालांबुका धत्ते फलानि प्रचुराण्यपि।।

पटोल पौधे में फाल्गुन में शुष्क घास की अग्नि से सेक तथा चौत्र में खली मिश्रित जल का छिडकाव करने पर अधिक फल आते है–

पटोलाः फाल्गुने मासि तृणानलकरातिताः।
चौत्रॅफलंति संसिक्ताः संधितैः खलिका जलैः।।

वृक्षायुर्वेद एवं उद्यानिकी, बागवानी के पादपों में उर्वरक प्रयोग के विषय में जैविक पदार्थो – मांस, मेद, अस्थिक, गोबर, मूत्र उडद, चावल, दूध, घी, शहद आदि का प्रयोग सुरपाल से पूर्ववर्ती एवं परवर्ती लगभग सभी शास्त्र आचार्यो ने बताये हैं। आचार्य शार्ङ्गधर ने उपवन विनोद में पोषणविधि शीर्षक के अतंर्गत इन प्रविधियों का वर्णन करते हैं। आचार्य शार्ङ्गधर के द्वारा पौधों के लिये अनुशंसित खाद सामग्री निम्न प्रकार है–

पादप विशेष	–	अनुशंसति उर्वरक विशेष
खर्जूर, विल्व, लकुच	–	सफेद सरसों या तिल की खली का चूरा
आम्र	–	तुषवारिसेक दूध पंचपल्लव (आम, अश्वस्थ, वट, प्लस के साथ हिरण, शूकर, लोमडी,हाथी आदि की यज्ञ, द्रुम वसा की मिश्रण
ऐरावत निचुल पत्र	–	सामान्य सिंचाई तथा ब्रीहि–मांस युक्त जल से सिंचाई
पुराना आमला	–	उडद माष मिश्रित जल
तिंदुक	–	दुग्ध मिश्रित जल
नारियल	–	जौ का चूर्ण
दाडिम	–	घी, कुणप, वचा, शूकरमल, मिश्रित जल कुलत्थ का क्वाथ, शफरी मछली का जल
कदम्ब, नागकेसर	–	दही, खमीरयुक्त चावल का पानी, चावल, तिल, कुणपजल युक्त मदिरा, शर्करा, दूध
चम्पक, नागकेसर	–	प्रियंगु, गुंजाफल, निम्ब, पिप्पली, वचा, हरिद्रा,तिल सरसो (समान मात्रा में) घी, अश्वकर्ण जल जल (असगंध) मिश्रित जल से सिचाई।
गोस्तनी (गारूडी)लता	–	मुर्गे की बीट, धान का पलाल, तुष मिश्रित जल, वचायुक्त जल
पनस	–	उपर्युक्त तथा वचा युक्त जल
कपित्थ, विल्व	–	घी, दूधा, शहद
मधूक	–	कोशातकी के पत्ते, पिप्पल, कुणप जल
बदरी	–	तिल, यष्टिमधु एवं कुणप जल
बीजपूर	–	भेड, बकरी, शुकर आदि का मल, विडग मिश्रित खमीर उठा जल, भेड तथा घोडे के मल से सिंचन
सभी लताये	–	वृश्चिकडंक, वेधन, घी, दूध, मूषक, शूकर वसा का खमीर उठा जल
केतकी	–	गोमूत्र, कुणप जल
सभी सुगंधित पुष्पदार पौधे–		कुष्ठपत्र, मुरा, मुस्त, तगर, उशीर चूर्ण मिश्रित जल
पद्मिनी	–	कुल्माष (कुलत्थ)

सभी वृक्ष	–	सफेद सरसों, शफरी मछली, कदली पत्र, शूकर, बिल्ली का मल तथा घी इन सभी को मिश्रण से लेप तथा धूप।
छोटे पौधे	–	जौ, घी, दुग्ध, जल,कुणप से सिंचन विडंग तथा तिल की कल्प का लेप
सभी पेड	–	घी, शहद, शूकर, हिरण वसा, अंकोलक्वाथ मिश्रित जल

यष्टिमधु, मधूकपुष्प, श्वेतकुष्ठ, शहद का कल्क बनाकर उसकी गोलियां बनावे तथा जडों के पास डालें।

शिव तत्व रत्नाकर तथा विरूश्ववल्लभ में भी इसी प्रकार पादप पोषण की प्रविधियाँ प्रशस्त की गई हैं। अधिकांशतः इनमें ज्यों की त्यों वर्णित हैं। अतः पुनरावृत्ति से बचा जा रहा है। विश्ववल्लभ आदि में भी जैविक एवं कार्बनिक कृषि की ही तकनीकें बताई गई है। संस्कृत वाङ्मय में अनुशंसित उर्वरक सामग्री मे मुख्यतः पशुओं के अवशेष, हरी खाद, पौधे के अवशेष, तिलहन की खलियां, बुरादा, गोबर की खाद आदि प्रमुख हैं। इन पदार्थो को जब जमीन के अन्दर मिला दिया जाता है तो समयानुसार उनका सड़न होने लगता है। अधिकांश जैविक खाद जो संस्कृत में प्रशस्त की गई है वे जमीन में मिलाने से पूर्व ही सडा दी जाती है अर्थात उन्हें खमीरित कर दिया जाता है। तापमान के द्वारा पदार्थो के मिश्रण में किण्वन करके उनके रूप, गुण तथा रासायनिक तत्त्वों में परिवर्तन करने लगता है। भूमि में इस प्रकार की खादों से कवक, जीवाणु आदि सूक्ष्मजीव अपनी क्रियाओं से विघटित करके उर्जा प्राप्त करते है। तथा वृद्धि करते हैं। इन सभी परिवर्तनों का मृदा के भौतिक, रासायनिक तथा जैविक गुणों पर प्रभाव पड़ता है।

कार्बनिक पदार्थो के विघटन के फलस्वरूप मृदा में जलसंधारण क्षमता, रंग में परिवर्तन, उष्माधारण करने की क्षमता, मृदा के पोषक तत्वों की वृद्धि, वायु संचरण इत्यादि बढ़ जाने से फसलों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। जीवों के भेद –मांस, अस्थि, मल–मूत्र, हरीखाद, पोल्ट्रीखाद, खली आदि – मृदा इत्यादि का उर्वरक भी लाभदायक माना जाता है।

संस्कृत साहित्य में वर्णित कृषि वैज्ञानिक चिन्तन में उर्वरकों के विषय में स्पष्टतया कार्बनिक या जीवांशों को प्रयोग विहित है। भारतीय कृषि के इतिहास में फसलों के अधिक उत्पादन हेतु गोबर की खाद का महत्व रहा है। गोबर के साथ–साथ अन्य जीवांशों का भी उर्वरता वृद्धि हेतु प्रयोग किया जाता रहा है। संस्कृत साहित्य में वर्णित प्रमुख उर्वरक घटक निम्नलिखित है –

- पशुओं –पक्षियों के गोबर –मूत्र से तैयार खाद
- धान के तुष –चारे के अवशेष से तैयार खाद
- खाद्यान्नों चावल, उड़द, तिल, सरसों से तैयार खाद एवं इनके सह उत्पादों – खली आदि से तैयार खाद के सहयोग।
- पशुओं के उत्पाद दूध–दही–घी, आदि के सहयोग से तैयार खाद
- फसलों के अवशेष तथा पेड–पौधों की पत्तियों से तैयार खाद
- पत्तीदार –हरी– भरी फसलों से खेत में तैयार हरी खाद।

– फूलों – औषधियों एवं शहद से तैयार खाद।

उपर्युक्त सभी प्रकार के उर्वरक पदार्थो में न्यूनाधिक रूप से पौधों की आवश्यकतानुसार पोषक तत्त्व होते हैं। रासायनिक उर्वरक जैसे यूरिया आदि से केवल तत्व विशेष नाइट्रोजन की तो पूर्ति होती है, लेकिन अन्य मृदा के पोषक तत्त्वों की मात्रा कम तथा असन्तुलित हो जाती है। भूमि में फास्फोरस, पोटेशियम, सूक्ष्म पोषक तत्वों –जिंक आयरन, बोरान, मैग्नीज आदि की कमी हो जाती है। जैविक खादों के प्रयोग से भूमि मे सभी पोषक तत्वों का सन्तुलन स्थापित रहता है तथा गुणवत्ता में निरन्तरता बनी रहती है। वर्तमान समय में देश जैविक कृषि को प्रोत्साहित किया जा रहा है। वैज्ञानिकों ने मृदा में जैवांशों की मात्रा में कमी को देखते हुए अधिकाधिक कार्बनिक खादों के प्रयोग को प्रोत्साहित किया है।

वर्तमान में भूमि की उर्वराशक्ति में कमी के अनेक कारण है, जिसमें रासायनिक खाद प्रयोग आदि अन्य कारणों के साथ किसानों द्वारा धान, गेहूँ आदि एक ही फसल चक्र को अनवरत अपनाना भी है। फसलों में दलहनी फसलों का समावेश किया जाना चाहियें। संस्कृत कृषि शास्त्र में भी यह अनेकशः उल्लेख है कि भूमि की गुणवत्ता बनाये रखने के लिये विभिन्न फसले लेनी चाहिये। कार्बनिक खादों का अधिक प्रयोग करना चाहिये। इस खाद में पौधो की वृद्धि के लिये आवश्यक पोषक तत्व, जीवाणु, हार्मोन्स एवं एन्जाइम पाये जाते है। इस खाद के प्रयोग से मिट्टीमें जैवांश की मात्रा बढती है तथा मृदा का पी.एच.सन्तुलित रहता है।

हरीखाद से मृदा की उर्वरता में पर्याप्त वृद्धि होती है। इसमें दलहनी पौधो को उगाकर वापस खेत में वहीं मिला देते हैं। आचार्य शार्ङ्गधर एवं वराहमिहिर इस तथ्य से पूर्णतः परिचित थे –

मृद्वीभू : सर्ववृक्षाणां हिता तस्यां तिलान् वपेत्।
पुष्पितास्तांश्च मृद्नीयात् कर्मैतत् प्रथमं भुवः ।।

अर्थात् बागवानी से पहले भूमि चयन करके वहां तिल बोये, जब उनमें फूल आ जाये तो खडी फसल समेत ही उसमें जुलाई करनी चाहिये यह प्रथम भू संस्कार है–

सम्यक कृष्टे समेक्षेत्रे माषानुप्त्वा तिलांस्तथा।
सुनिष्पन्नानपनयेत्तत्र बीजोप्तिरिष्यते।।

मिट्टी के अन्दर होने वाला अनेक जैव रासायनिक क्रियाओं के लिये सूक्ष्म जीवों की आवश्यकता होती है अतः भूमि में समुचित जैवांश होना आवश्यक है। सूक्ष्मजीवी हरी खाद से अपना भोजन प्राप्त करते है तथा मृदा की उर्वरा शक्ति मे वृद्धि होती है। इसके लिए वानस्पतिक सामग्री मुख्यतः हरे दलहनी पौधो को खेत में उगाकर वहीं जुताई कर पुनः मिट्टी में मिला देना चाहिए हैं। हरी खाद के लिये चयनित दलहनी या तिलहनी फसल तेजी से वृद्धि करने वाली, मुलायम, रेशारहित तथा अधिक पत्तों एवं टहनियों से युक्त होनी चाहिये।इन फसलों की जडे गहरी होती हैं। जिससे नीचे की मिट्टी भुरभुरी हो जाती है तथा नीचे से पोषक तत्व भूमि की उपरी सतह पर आ जाते हैं। दलहनी फसलों की जडो में स्थित ग्रंथियां में उपस्थित जीवाणु वायु के नाइट्रोजन को स्थिर कर उपलब्ध कराते हैं। हरी खाद के रूप में उडद, मूंग, ढेंचा, ग्वार, मटर आदि बोये जा सकते हैं। निष्कर्षत : कहा जा सकता है कि संस्कृत कृषि पद्धति में उर्वरावृद्धि हेतु भूमि में अनुशंसि कार्बनिक जैविक खादों से चिरकाल तक गुणात्मकता युक्त, श्रेष्ठ फसले ली जा सकती हैं। यह उर्वरक टिकाउ, सस्ते एवं

प्राकृतिक हैं। इनमें रोगप्रतिरोधकता पोषक तत्वों की प्रचुरता होती है जो पौधों को अच्छा विकास प्रदास करते हैं। संस्कृत साहित्य में उल्लिखित कुणपजल तथा अन्य तरलखाद विधियां, कल्प, क्वाथ, लेप, धूप आदि वृक्षो को बीमारियों से बचाकर उनको उचित पोषण प्रदान करते हैं। आज रासायनिक खादों के बढते हुये दुष्प्रभाव रोकने लिये इन्हें प्रयोग में लेना आवश्यक है।

11.9 सारांश

भारतीय कृषि के इतिहास में फसलों के अधिक उत्पादन हेतु गोबर की खाद का महत्व रहा है। गोबर के साथ–साथ अन्य जीवांशों का भी उर्वरता वृद्धि हेतु प्रयोग किया जाता रहा है। संस्कृत साहित्य में वर्णित प्रमुख उर्वरक घटक निम्नलिखित है –

- पशुओं –पक्षियों के गोबर –मूत्र से तैयार खाद।
- धान के तुष –चारे के अवशेष से तैयार खाद।
- खाद्यान्नों चावल, उड़द, तिल, सरसों से तैयार खाद एवं इनके सह उत्पादों – खली आदि से तैयार खाद के सहयोग।
- पशुओं के उत्पाद दूध–दही–घी, आदि के सहयोग से तैयार खाद
- फसलों के अवशेष तथा पेड–पौधों की पत्तियों से तैयार खाद।
- पत्तीदार –हरी– भरी फसलों से खेत में तैयार हरी खाद।
- फूलों – औषधियों एवं शहद से तैयार खाद।

संस्कृत कृषि पद्धति में उर्वरावृद्धि हेतु भूमि में अनुशंसित कार्बनिक जैविक खादों से चिरकाल तक गुणात्मकता युक्त, श्रेष्ठ फसलें ली जा सकती है। यह उर्वरक टिकाउ, सस्ते एवं प्राकृतिक हैं। इनमें रोगप्रतिरोधकता पोषक तत्वों की प्रचुरता होती है जो पौधों को अच्छा विकास प्रदास करते हैं। संस्कृत साहित्य में उल्लिखित कुणपजल तथा अन्य तरलखाद विधियां, कल्प, क्वाथ, लेप, धूप आदि वृक्षो को बीमारियों से बचाकर उनको उचित पोषण प्रदान करते हैं। आज रासायनिक खादों के बढते हुये दुष्प्रभाव रोकने लिये इन्हें प्रयोग में लेना आवश्यक है।

11.10 पारिभाषिक शब्दावली

- उर्वरक – उर्वरक कृषि में उपज बढ़ाने के लिए प्रयुक्त तत्त्व हैं जो पेड–पौधों की वृद्धि में सहायता के लिए इस्तेमाल किए जाते हैं। पानी में शीघ्र घुलने वाले ये रसायन मिट्टी में या पत्तियों पर छिड़काव करके प्रयुक्त किये जाते हैं। पौधे मिट्टी से जड़ों द्वारा एवं ऊपरी छिड़काव करने पर पत्तियों द्वारा उर्वरकों को अवशोषित कर लेते हैं।
- पंचगव्य – पंचगव्य का निर्माण गाय के दूध, दही, घी, मूत्र, गोबर के द्वारा किया जाता है। पंचगव्य एक जैविक खाद या प्राकृतिक सामग्री से बनी हुई जैविक विकास उत्तेजक औषधि है, जो पौधे के विकास को बढ़ाने के साथ ही मिट्टी के उपयोगी जीवाणुओं की सुरक्षा करता है।
- द्रोण – प्राचीन भारत में माप की कई पद्धतियाँ प्रचलित थीं जिनमें द्रोण भी है। इसका माप है –1 द्रोण =16.5 किलो

- आढक – प्राचीन भारत में माप की कई पद्धतियाँ प्रचलित थीं जिनमें आढक भी है। इसका माप है – 1 आढक =4 किलो
- करिष् – वैदिक काल में खाद के लिये मुख्यतः गाय का गोबर प्रयोग होता था, जिसके लिये करिष–शकन्, शकृत आदि शब्दों को प्रयोग प्राप्त होता था।
- कुणप जल – प्राचीन समय में पौधों के लिए उत्तम पोषक के रूप में तैयार सघन विलयन बनाया जाता था जिसे ही कुणप जल कहा जाता था।
- पंचपल्लव– पीपल, आम, बड़, गूलर एवं पाकड़ के पत्तों को ही पंचपल्लव के नाम से जाना जाता है।

11.11 अभ्यास प्रश्न

1. गोबर की खाद के निर्माण एवं अनुप्रयोग का वर्णन कीजिए?
2. पंचगव्य एवं मांस से निर्मित उर्वरकों के निर्माण की विधि को समझाइए?
3. पोषक उर्वरक निर्माण पर प्रकाश डालिए?
4. कुणप जल किसे कहा जाता है? कुणप जल के निर्माण पर एक निबन्ध लिखिए?
5. संस्कृत साहित्य में उल्लेखित विशेष पादपों हेतु विशेष उर्वरकों की समीक्षा कीजिए?

11.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- झा, कृष्णानन्द (व्या०), उपवनविनोद (शार्ङ्गधर विरचित), कामेश्वरसिंह संस्कृत विश्वविद्यालय, दरभंगा, 1965.
- जुगनू, श्रीकृष्ण (व्या०), वृक्षायुर्वेद (सुरपाल विरचित), चौखम्भा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी, 2018.
- गैरोला, वाचस्पति, अर्थशास्त्र, चौखम्भा विद्याभवन, वाराणसी, 2017
- शर्मा, नीरज, संस्कृत कृषिशास्त्र, लिटरेरी सर्किल, जयपुर, 2013.
- पाण्डेय, नगेन्द्र, बृहत्संहिता–गर्भलक्षणाध्याय (भट्टोत्पलटीका), सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, 2002.
- शास्त्री द्वारिकाप्रसाद, कृषि पाराशर, चौखम्भा संस्कृत सीरीज ओफिस, वाराणसी, 2017.
- जुगनू श्रीकृष्ण, काश्यपीय कृषिसूक्ति, चौखम्भा संस्कृत पुस्तकालय, वाराणसी, 2013.